RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-02
February-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

पूर्व-मध्ययुगीन मालवा की ऐतिहासिकता

[1]गुलाब राव डोंगरे; [2]डॉ. विजेता चौबे

[1]सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग, डॉ. भीमराव आंबेडकर शासकीय महाविद्यालय, आमला, जिला – बैतूल, मध्य प्रदेश
[2]प्राध्यापक, इतिहास विभाग, जयवंती हॉस्कर शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल, मध्य प्रदेश

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 20 February 2019

Keywords
मालवा, ऐतिहासिक राज-वंश, परम्परा, इतिहास, रीति-रिवाज और संस्कृति, कुषाण वंश।

ABSTRACT

प्रस्तुत शोध पत्र में पूर्व मध्ययुगीन मालवा में सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। जिसमें पूर्व मध्ययुगीन मालवा की भौगालिक एवं प्राकृतिक संरचना तथा ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, आलोच्य अवधि के पूर्व मालवा का सामाजिक एवं आर्थिक जीवन का अध्ययन, पूर्व मध्ययुगीन मालवा के सामाजिक जीवन के अन्तर्गत वर्ण, जाति, गोत्र एवं प्रवर, खान-पान, रीति-रिवाज, विवाह, मनोरंजन के साधन एवं स्त्रियों की स्थिति, पूर्व मध्ययुगीन मालवा का आर्थिक जीवन के अन्तर्गत कृषि, उद्योग-व्यवसाय, व्यापार, व्यापारिक मार्ग, विनिमय के माध्यम एवं मुद्रा राजस्व का अध्ययन तथा समीपवर्ती क्षेत्रों के सामाजिक-आर्थिक जीवन प्रवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

प्राचीन ग्रंथों में मालवा और महाभारत में मालवों का उल्लेख मिलता है। अपनी पड़ोसी जाति क्षुद्रकों की ही तरह मालव, जो कि एक जाति विशेष का संघ था[1] मालवों ने महाभारत युद्ध में कौरवों की ओर से युद्ध में भाग लिया था। वे पंजाब में निवास करते थे, जहाँ वे अंवष्ट, यौधेय आदि जन विशेष के बाद कई शताब्दियों तक बने रहे। यूनानी सम्राट सिकन्दर के आक्रमण के समय मालवगण का राज्य मुख्यतः रावी और चिनाब के दोआब में था। क्षुद्रकों का राज्य मालवों के राज्य से लगा हुआ था, इसीलिये मालवों ने क्षुद्रकों से सुदृढ़ एकता स्थापित की। दोनों सेनाओं ने वीरता और दृढ़ता के साथ डटकर सिकन्दर का सामना किया।

यूनानी इतिहासकार एरियन के अनुसार - पंजाब में निवास कर रही भारतीय जातियों में मालव और क्षुद्रक संख्या में बहुत अधिक तथा सब से अधिक युद्ध कुशल थे, अतः उनकी सेनाओं का सामना करने से यूनानी सेना भी हिच-किचाने लगी थी, जिससे सिकन्दर को स्वंय आगे बढ़ना पड़ा था और उस युद्ध में वह विशेष आहत भी हुआ था, अन्त में मालव पराजित हुये और उन्हें हथियार डालने पड़े।

पाणिनि के अनुसार – मालवगण एक आयुध जीवी संघ थे। युद्ध विद्या में निपुणता प्राप्त करना इस संघ के प्रत्येक नागरिक का प्रधान कर्तव्य होता था, अतः वहां सभी निवासी योद्धा हुआ करते थे। मालवों का समाज अपनी पूर्ण और विकसित अवस्था को पहॅच चुका था। उसमें क्षत्रिय, ब्राह्मण आदि कई वर्ग होते थे। मालवगण का अधिकार क्षेत्र बहुत विस्तृत और संगठन अति बलशाली था, जिससे उनको पराजित करना कठिन होता था। कात्यायन और पंतजलि के द्वारा भी क्षुद्रक मालवी सेना का उल्लेख मिलता है, इसके बाद क्षुद्रकों का कहीं कोई उल्लेख नहीं मिलता, जिससे यही अनुमान होता है कि सिकन्दर के आक्रमण के समय स्थापित मालव-क्षुद्रक-एक्य समय पाकर अधिकाधिक बढ़ता ही गया और अंत में क्षुद्रक मालवों मे ही पूर्णतया समाविष्ट हो गये।

मौर्य साम्राज्य के पतन के बाद बैक्ट्रियन और पार्थियन राजाओं ने पंजाब तथा सिन्ध पर आधिपत्य स्थापित कर लिया, तब अपनी स्वतंत्रता तथा स्वशासन को संकटापन्न देखकर ईसा पूर्व की दूसरी शताब्दी में मालवगण विवश होकर पंजाब छोड़कर दक्षिण पूर्व की ओर बढ़े। सतलज पार करके पहले कुछ काल तक वे फिरोजपुर, लुधियाना और भटिन्डा के प्रदेश में रहे, जिससे वह क्षेत्र आज भी मालव कहलाता है, किन्तु यहाँ भी वे अधिक अधिक काल तक नहीं ठहर पाये और आगे बढ़ते हुये वे उसी शताब्दी में अजमेर से दक्षिण पूर्व में मेवाड़ के प्रदेश में जा पहुचे तथा वहां अपने स्वाधीन गणराज्य की स्थापना की।[1]

कुषाण साम्राज्य के उत्थान के साथ ही गुजरात में उनके अधीन पश्चिमी क्षत्रपों ने उज्जैन को जीतकर मालवों पर भी अपना आधिपत्य स्थापित किया था, परन्तु स्वतंत्रता प्रेमी मालव निरन्तर विद्रोह करते रहते थे। अंत में मालवों के सहयोग से ही गौतमीपुत्र शातकर्णी ने महाक्षत्रप नहापाण और उसके साथी शकों का पूर्ण संहार किया, हालांकि बाद में शको ने पुनः आधिपत्य हासिल किया, फिर भी तीसरी शती के प्रारंभ में श्री सोम के नेतृत्व में उन्होंने फिर मालव गणराज्य की स्वाधीनता घोषित कर दी। इसके बाद मालवगण ककांट नगर से दक्षिण से उस सारे प्रदेश में फैल गये, जो आगे चलकर अन्य भागों में फैल गये।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

'विष्णुपुराण' श्लोक संख्या 2, 3 एवं 17 में मध्य प्रदेश के मालव का उल्लेख इस प्रकार है - **'कारूषा मालवाष्चैव पारियात्रनिवासिनः'**

कालिदास के 'मालविकाग्निमित्र' नाटक की नायिका मालविका इसी मालव देश की निवासिनी थी। कुछ विद्वानो के मत में विक्रम संवत पहले मालव-संवत के नाम से प्रसिद्ध था, जिसे चंद्रगुप्त विक्रमादित्य ने अपनी मालव विजय के पश्चात इसका नाम 'विक्रम संवत' कर दिया। उत्तर गुप्तकाल में सप्त-मालव-जनपदों का उल्लेख मिलता है। एपीग्राफिका इंडिका जिंद 5 के अभिलेख में विक्रमादित्य के सामंत दण्डनायक अनंत पाल की सप्त मालवों पर विजय का वर्णन है। श्री रायचौधरी के अनुसार ये जनपद इस प्रकार थे -

1. पश्चिमी घाट पर स्थित कनारा प्रदेश, जहां के निवासी शिवाजी के समय में मावली कहलाते थे।
2. मालवक-आहार जिसका उल्लेख वल्लभि दानपट्टों में है। यह मैत्रेयकों का राज्य था।
3. अवंतिका, यहां छठी शती में कलचुरियों का राज्य था।
4. पूर्वमालव या भीलता का परिवर्ती क्षेत्र।
5. प्रयाग, कौशाम्बी तथा फतेहपुर का प्रदेश।
6. पूर्वी राजस्थान का एक भाग
7. सतलज के पूर्व में स्थित प्रदेश जो हिमालय तक विस्तृत था।

पूर्व मध्ययुगीन मालवा और परमार तथा उसकी शाखाएं :

देश-काल के आयामों में आबद्ध प्रघटित महत्वपूर्ण-परिवर्तनकारी घटनायें इतिहास की अवधारणा का निर्माण करती है। विवेच्य युगीन ऐतिहासिक घटनायें स्थान एवं काल में अद्वितीय है किन्तु मानवीय इतिहास में विज्ञान रीतियों में एक नितान्त ही नवीन रीति है, जिसे सम्मानित नहीं किया जा सकता, क्योंकि यह युद्ध, आक्रमण, हिंसा, बलात्कार, अग्नि विध्वंस एवं अन्य मानवीय मर्यादा का उल्लंघन वाली घटनाओं से परिपूर्ण है। छठी शताब्दी से बारहवी शताब्दी तक का भारतीय इतिहास विदेशी आक्रमणकारी शक्तियों के द्वन्द विश्व इतिहास का कलंकित पृष्ट है, जिसे मानवीय युद्ध की संज्ञा नहीं दी जा सकती है। विवेच्य पूर्व घटनाओं के स्वरूप का तथ्यात्मक विवरण प्रस्तुत करने में समकालीन सहित्यिक लेखकों का भी मस्तक लज्जा से झुक जाता है, इसलिये समकालीन इतिहासकारों ने प्रतिरोध शक्तियों के तथ्यात्मक विवरण दुराग्रहपूर्ण तथा एक पक्षीय रूप में प्रस्तुत किये है। कोयेनराड इल्स्ट ने इस्लाम के तथ्यों को छिपाने पर एक पुस्तक 'निगेश निज्म इन इण्डिया' में लिखकर यह प्रमाणित किया है कि इतिहास लेखन में विवेच्य कालीन दरबारी इतिहासकारों ने तथ्यों, घटनाओं, आक्रमणों एवं प्रतिरोधों को किस सीमा तक प्रछन्न एवं छद्म रूप में प्रस्तुत किया है, और उसी को प्रमाणित मान का विवेच्य युगीन इतिहास को प्रस्तुत किया गया है।

परमार एक राजवंश का नाम है, जो मध्ययुग के प्रारम्भिक काल में महत्वपूर्ण स्थान रखता हैं। सिन्धुराज के दरबारी कवि पद्मगुप्त ने अपनी पुस्तक 'नवसाहसांकचरित' में एक कथा का वर्णन किया जिसके अनुसार ऋषि वशिष्ठ ने ऋषि विश्वामित्र के विरूद्ध युद्ध में सहायता प्राप्त करने के लिये आबू पर्वत पर यज्ञ किया। उस यज्ञ के अग्निकुण्ड से एक पुरुष प्रकट हुआ। दरअसल ये पुरुष वे थे जिन्होने वशिष्ठ को साथ देने का प्रण लिया जिसके पूर्वज अग्निवंश के क्षत्रिय थे। जो इस वंश का संस्थापक हुआ और उसी के नाम पर वंश का नाम पड़ा। परमार के अभिलेखों में इसी कहानी को पुनः उल्लेखित किया। इससे कुछ लोग यह समझने लगे कि परमारों का मूल निवास स्थान आबू पर्वत पर था, जहां से वे पड़ोस के देशो में जाकर बस गये, किन्तु इस वंश के एक प्राचीन अभिलेख से पता चलता है कि परमाण दक्षिण के राष्ट्रकूटों के उत्तराधिकारी थे।

परमार परिवार की मुख्य शाखा आठवी शताब्दी के प्रारंभिक काल से मालवा में धार को अपनी राजधानी बनाकर राज्य करती थी और इसका प्राचीनतम ज्ञात सदस्य उपेन्द्र कृष्णराज था। इस वंश के प्रारंभिक शासक दक्षिण के राष्ट्रकूटों के सामन्त थे। राज-राष्ट्रकूटों के पतन के बाद सियक द्वितीय के नेतृत्व में यह परिवार स्वतंत्र हो गया। इसके बाद 10वीं शताब्दी के अंतिम चतुर्थांश में वाकपति मुंज, ने केवल अपनी स्थिति ही सुदृढ़ नहीं की वरन् दक्षिण राजपूताना का भी एक भाग जीत लिया और वहां महत्वपूर्ण पदों पर अपने वंश के राजकुमारों को नियुक्त कर दिया। उसका भतीजा भोज, जिसने सन् 1000 से 1055 तक राज्य किया। यह सर्वतोमुखी प्रतिभा का शासक था और मध्ययुगीन सर्वश्रेष्ठ शासको में गिना जाता था। भोज ने अपने समय चैलुभ्य, चंदेल, कलचूरी और चालुक्य आदि सभी शक्तिशाली राज्यों से युद्ध किया। बहुत बड़ी संख्या में विद्वान् इसके दरबार में दयापूर्ण आश्रय पाकर रहते थे। वह स्वंय भी महान लेखक था। राजा भोज की मृत्यु के पश्चात् चैलुक्य, कर्ण और कर्णाटों ने मालव को जीत लिया, किन्तु भोज के एक संबंधी उदयादित्य ने शत्रुओं को बुरी तरह पराजित करने अपना प्रभुत्वः पुनः स्थापित करने में सफलता प्राप्त की। उदयादित्य ने मध्यप्रदेश के उदयपुर नामक स्थान में नीलकण्ठ शिव के विशाल मंदिर का निर्माण कराया था। वह मृत्यु के बहुत बाद तक पश्चिमी भारत के लोगों में अपनी गौरवपूर्ण उपलब्धियों के लिये प्रसिद्ध रहा। सन् 1305 में अलाउद्दीन खिलजी द्वारा परमार वंश का अन्त कर दिया गया। परमार वंश की एक शाखा आबू पर्वत पर चंद्रावती को अपनी राजधानी बनाकर 10वी शताब्दी के अंत से 13वी शताब्दी के अंत तक राज्य करती है। इस वंश की दूसरी शाखा वगत अर्थात वर्तमान बांसवाडा और डूंगरपुर रियासतों में वर्तमान अर्थुना पर 12 वीं शताब्दी के मध्यकाल तक शासन करती रही इस वंश की दो शाखाएं और ज्ञात है, एक ने जालोर में और दूसरी ने बिनमाल में 10वीं शताब्दी के अंतिम भाग से 12 वीं शताब्दी के अंतिम भाग तक राज्य किया।

वर्तमान में परमार वंश की एक शाखा उज्जैन के नंदवासला, खाताखेड़ी तथा नरसिंहगढ़ एवं इन्दौर के गांव बेगन्दा में निवास करते है। धारविया परमार तलावली में भी निवास करते है। कालिका माता के भक्त होने के कारण ये परमार कलौता के नाम से भी जाने जाते है। धारविया भाजवंश परमार की एक शाखा धार जिले के सरदारपुर तहसील में रहती

RRIJM 2015, All Rights Reserved

है। इनकी तीन शाखा और है - एक बूसी गाँव में, दूसरी मालपुरिया राजस्थान में और तीसरी नीमच में निवासरत है। 11 वीं से 17 वीं शताब्दी तक पंवारो का प्रदेशान्तर सतपुड़ा और विदर्भ में हुआ। सतपुड़ा क्षेत्र में उन्हें भोयर पंवार कहा जाता है। धार नगर से 15 वीं से 17 वीं सदी स्थानान्तरित हुये पंवारों की करीब 72 शाखाएं बैतूल, छिंदवाड़ा, वर्धा एवं अन्य जिलों में निवास करती है। पूर्व विदर्भ, मध्यप्रदेश के बालाघाट सिवनी क्षेत्र में धार नगर से सन 1700 में स्थानान्तरित हुये पंवार अथवा पोवारों की करीब 36 शाखाएं निवास करती है जो कि राजा भोज को अपना पूर्वज मानती है। संस्कृत शब्द प्रमार से अपभ्रन्षित होकर परमार तथा पवार अथवा पोवार एवं भोयर पंवार शब्द प्रचलित हुये।

मालवा का इतिहास रोचक है। विवेच्य युग (600-1200) में मालवा में एवं सीमावर्ती क्षेत्रों में राजनीतिक उथल-पुथल के परिणाम स्वरूप इसकी स्वतंत्र सीमाओं में सदा परिवर्तन होता रहा। इस राज्य पर समय-समय पर कई राजवंशों का आधिपत्य था जैसे- गुप्तवंश, वर्धनवंश, चालुक्य, गुर्जर-प्रतिहार, कलचुरी, राष्ट्रकूट तथा परमारवंश । परमारवंशीय शासक मालवा के पूर्णतः प्रतिनिधि शासक थे। अन्य राजवंशों के शासकों का राज्य इस क्षेत्र में अल्पकालीन रहा।[2] मालवा में छोटे-छोटे स्थानीय राजाओं की प्रादेशिक सत्ता से सम्बन्धित अनेक विवरण है। राजनीतिक परिस्थितियों के अनुसार ये राजा या तो कुछ समय तक स्वतंत्र शासकों के रूप में राज्य करते रहे, अथवा किसी बड़ी शक्ति के आधीन रहे। विवेच्य युग (600-1200 ई.) के मालव प्रदेश के प्रमुख शासकों अथवा उनके अधीनस्थ स्थानीय राजाओं का में मुख्यतः गुप्तवंशीय राजाओं से लेकर परमार वंशीय राजाओं का उल्लेख किया जा सकता हैं। इन में सर्वप्रथम छठी शताब्दी के मध्य में इस क्षेत्र में औलिकरवंश के शासकों का उल्लेख प्राप्त होता है।[3] औलिकर वंश राजा गुप्तों के आधीन थे। दशपुर के क्षेत्र में इनके शासन के उल्लेख अभिलेखों से प्राप्त है। सातवीं शती में मालवा के पश्चिमी भाग पर मैत्रयकों का आधिपत्य हो गया था।[4] इसकी सिद्ध व्यानच्वांग के विवरण से होती है, जिस में मो-ला-पो अर्थात मालवा का उल्लेख है।[5] लगभग 606 ई. में हर्षवर्धन के राजा होने के अवसर पर मालवा पर देवगुप्त का अधिकार था। देवगुप्त को अंततोगत्वा हर्ष ने परास्त किया था। राज्य के उत्तर में इस समय मौरवरी वंश की अधिसत्ता स्थापित थी।[6] मालवा में इस समय महासेन गुप्त शासक था।[7] रायचौधरी ने देवगुप्त को सम्भवतः मालववंश की किसी अन्य शाखा का बताया है जो हर्ष के विरोधी थे।[8] सन् 608 ई. के वाडनेर अभिलेख से बुद्धराज कलचुरी के विदिशा पर शासन करने क प्रमाण मिलता है।[9] पश्चिमी मालवा में कलचुरियों के दमन का श्रेय मैत्रयक राजा खरग्रह प्रथम को है।[10]

मालवा क्षेत्र में लगभग 791 ई. से परमारों का शासन प्रारम्भ हुआ। इनका प्रथम राजा 'उपेन्द्र' था। इसका उल्लेख उदयपुर प्रशस्ति में प्राप्त होता है।[11] परमार मालवा के प्रतिनिधि शासक थे। सामान्यतः इन्हें प्रारम्भ से ही मालवा का शासन स्वीकार किया गया। परमार राजा उपेन्द्र ने ही परमार वंश की स्थायी परम्परा स्थापित की। परमार राजाओं की क्रमबद्ध वषीय सूची 'नवसाहसांकचरित', 'नागपुर प्रशस्ति', 'नागपुर अभिलेख' तथा 'भोज के अभिलेखों' से प्राप्त होती है।[12]

उपेन्द्र के पश्चात् 'वैरिसिंह प्रथम' तथा 'सीयक प्रथम' दो नरेश हुये। इनमें 'वैरिसिंह प्रथम' का राज्य काल 818-843 ई. तक माना जाता है। इसके पश्चात् 'सीयक प्रथम' ने 843-868 ई. तक शासन किया। इसकी सूचना उदयपुर प्रशस्ति से प्राप्त होती है।[13] सन् 868-893 तक के राजाओं के नाम नहीं प्राप्त होते है। 'नवसाहसांक चरित' के विवरण से ज्ञात होता है कि 'उपेन्द्र' पश्चात् परमार राजा 'वाक्पति प्रथम' (893-918 ई.) तथा इसके पश्चात् 'वाक्पति प्रथम' का उत्तराधिकारी 'वैरिसिंह द्वितीय' (919-945 ई.) तक शासन रहा। इसको 'व्रजट' नाम से भी सम्बोधित किया जाता था। इस परमार राजा ने गुर्जर प्रतिहार तथा राष्ट्रकूटों को परास्त कर धारा नगरी में राजसत्ता स्थापित की थी।[14] इसके पश्चात् 'सीयक द्वितीय' ने (945-972 ई.) ने सिंहासन ग्रहण किया। 'सीयक द्वितीय' को 'महाराजाधिराजपति', 'महामाण्डिलिक' तथा 'चूड़ामणि' उपाधि से विभूषित किया गया है। इसे 'सिंहदत्त भट्ट' भी कहा गया है। इसने चालुक्यों तथा दक्षिण में मान्यखेट के राजा खोट्टिगदेव पर उल्लेखनीय विजय प्राप्त की थी।[15] 'सीयक द्वितीय' ने अपने जीवन काल में ही अपने पुत्र वाक्पति द्वितीय अर्थात मुंजदेव (974-994 ई.) को राज्य का पूर्ण कार्य भार सौंप दिया था। इसके शासन काल में राज्य के क्षेत्र का बहुत विस्तार हुआ। उत्तर में यह बांसवाड़ा, दक्षिण में गोदावरी तथा पूर्व में विदिशा तथा पूर्व में विदिशा और पश्चिमी में माही नदी तक विस्तारित था।

वाक्पति द्वितीय ने 'पृथ्वीवल्लभ', 'श्री वल्लभ' तथा 'अमोघवशर्' उपाधियां धारण की थी। इस प्रतापी तथा विद्वान राजा ने कर्णाट लाट अर्थात केरल और चोल देश के राजाओं को पराजित किया, चेदि के हैह्य कलचुरी नरेश युवराज द्वितीय को पराजित कर उसकी राजधानी त्रिपुरी को लूटा, मेवाड़ पर आक्रमण कर चित्तौड़गढ़ तथा उसके समीप का मालवा से मिला हुआ प्रदेश अपने राज्य में मिला लिया।[16] इसने छह बार सोलंकी नरेश तैलय द्वितीय को पराजित किया, किन्तु सातवें युद्ध में वह गोदावरी के पास बंदी बना लिया गया।[17] 'मुंज' के पश्चात् इनके लघुभ्राता 'सिन्धुराज' (997-1010 ई.) सिंहासनासीन हुआ। इसने 'नवसाहसांक', 'कुमार नारायण', 'अवन्ती तिलक', 'अवन्तीष्वर', 'परमार महिभर्त', 'मालवराज' आदि उपाधियां धारण की थी। इसने हूणों को पराजित किया एवं दक्षिण कौशल, वागड़ तथा लाट पर भी विजय प्राप्त की। इस राजा के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर परिमन पद्मगुप्त ने उज्जयिनी में निवास प्रारम्भ किया था।[18] परमार वंश के मेरूमणि 'राजा भोज' (1011-1055 ई.) थे। इन्होनें सत्ता प्राप्ति के उपरांत धारा नगरी को अपनी राजधानी बनाया तथा 'धारेष्वर' की उपाधि स्वंय धारण की। इसके समय में परमार शक्ति का विशेष विकास हुआ। भोज ने चेदीष्वर, इन्द्ररथ, भीम, तौगरूल, कर्णाट, लाट, गुर्जर राजाओं पर तथा तुरूशकों पर विजय प्राप्त की थी। भोज की यह विजयश्री अति महत्वपूर्ण है।[19]

RRIJM 2015, All Rights Reserved

तत्कालीन विद्वानों ने अपने ग्रन्थों में 'भोज' को अनेक उपाधि से अलंकृत किया है, जैसे 'त्रिविघवीर चूड़ामणि', 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर', 'पृथ्वी वल्लभ', 'श्री वल्लभ', तथा 'विक्रम' आदि। इसकी पुष्टि संस्कृत ताम्रपत्र, प्रशस्ति तथा शिलालेख करते है। अभिलेखों में भोज के लिये 'महाराजाधिराज', 'परमेश्वर' तथा 'मालव चक्रवर्ती' का उल्लेख प्राप्त होता है। विद्वानों ने भोज को 'भारतीय आगस्ट्स' की पदवी से विभूषित किया है। भोज के शासन के पश्चात् परमार सत्ता का स्खलन प्रारम्भ हो गया था। कालान्तर में राजा निरन्तर अपने अस्तित्व की रक्षा हेतु विभिन्न शक्तियों से संघर्ष करते रहे। भोज के पश्चात् का सम्पूर्ण परमार इतिहास इन्हीं पारस्परिक संघर्षो का इतिहास है।

भोज के उत्तराधिकारी 'जयसिंह' (1055-1070 ई.) हुये। 'जयसिंह' ने चालुक्यों की सहायता के अपने राज्य का पुनः विस्तार कर लिया। तत्पश्चात् 'उदयादित्य ' (1070-1086 ई.) शासक हुये। इन्होनें उदयपुर नगर बसाया था। इसने गुजरात के राजा कर्ण पर विजय प्राप्त की थी। 'उदयादित्य ' के पश्चात् इस का पुत्र 'लक्ष्मदेव' (1086-1094 ई.) शासक बना। इसे द्वारा प्राप्त गौड़-चेदि, पाण्ड्य, लंका, तुरूष्क तथा हिमालय के कीर नरेशों पर विजय के उल्लेख प्राप्त होते है, लेकिन इन विजयों की सत्यता संदिग्ध है। इसके पश्चात 'नरवर्मा' (1094-1133 ई.) ने राजसत्ता प्राप्त की। इनके राज्यकाल में जैनाचार्य रत्नसूरि तथा शैवाचार्य विद्याषिववादी का विद्वतापूर्ण शास्त्रार्थ महाकाल के मन्दिर में हुआ था। नरवर्मा के पश्चात् उसका पुत्र यषोवर्मा विद्वतापूर्ण शास्त्रार्थ महाकाल के मन्दिर में हुआ था। 'नरवर्मा' के पष्चात उसका पुत्र 'यषोवर्मा' (1133-1142 ई.) राजा हुआ। एक उज्जैन लेख में गुजरात के जयसिंह सिद्धराज द्वारा इसके पराजित होने का उल्लेख प्राप्त होता है, किन्तु चैहान नरेश की सहायता से उस ने पुनः अपने खोये हुये प्रदेशों को प्राप्त किया। 'यषोवर्मा' के बाद 'जयवर्मा' (1142-1143 ई.) सिंहासीन हुये। इन्होने अपने अल्पकालीन शासनकाल में धारा पर विजय प्राप्त कर ली थी। 'जयवर्मा' के बाद उसका पुत्र 'लक्ष्मीवर्मा' (1144-1148 ई.) सिंहासनारूढ़ हुआ। तत्पश्चात 'हरिश चन्द्रवर्मा' (1148-1174 ई.) और इसके पश्चात् 'हरिश चन्द्र' के उत्तराधिकारी 'अजयवर्मा' के पृत्र 'विन्धयवर्मा' (1175-1194 ई.) राजा हुआ। इसने गुजरात नरेशों की निर्बलता के लाभ उठा कर उन के कुछ प्रदेशों पर विजय प्राप्त की। इसका सन्धिविग्रहिक मंत्री 'विल्हण' था। 'विन्धयवर्मा' के पश्चात उसका पुत्र 'सुभटवर्मा' (1194-1209 ई.) शासक बना। राजसत्ता प्राप्त करने के पश्चात् ही उसने गुजरात पर आक्रमण कर दिया, हालांकि इस युद्ध में उसे विशेष सफलता नहीं मिली। इसके बाद 'अर्जुनवर्मा' (1210-1215 ई.) शासक हुआ। 'अर्जुनवर्मा' के पश्चात 'देवपाल' शासक हुआ। 'देवपाल' के शासनकाल में 'शमसुद्दीन अल्तमश ' ने 1235 ई. में उज्जैन पर आधिपत्य प्राप्त कर लिया। इस के बाद इस वंश के विभिन्न राजाओं का स्वतंत्र अस्तित्व समाप्त हो गया।

दिल्ली सल्तनत के समय में सन् 1401 में 'दिलावर खां गोरी' ने मालवा के सुल्तानों का राज्य कायम किया और उनका पुत्र राजधानी को धार से माण्डू ले गया। मुगल बादशाह 'बाबर' ने मालवा का वर्णन हिन्दुस्तान के चतुर्थ सबसे बड़े महत्वपूर्ण राज्य के रूप में किया है। 1561 में 'बाज बहादूर' के अकबर के हाथों पराजित होने के बाद यह क्षेत्र मुगलों के अधीन एक सूबा बन गया। यह क्षेत्र अपने इतिहास के लम्बे समय तक कलह और अराजकता से घिरा रहा। दक्कन को उत्तर से जोड़ने वाले मार्ग में हांडिया, महेष्वर, माण्डू और बुरहानपुर महत्वपूर्ण शहर थे। 1724 में 'पेशवा बाजीराव' के नेतृत्व और सिंधिया, होल्कर और पुआर की मदद से मराठों ने मालवा में प्रवेश किया। तीसरे मराठा युद्ध, 1871, में सत्ता अंग्रेजों के हाथों में चली गयी। 1861 में मालवा को मध्य प्रांत का हिस्सा बनाया गया। 1948 और उसके बाद 1956 में औपचारिक रूप से मालवा का विभाजन मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र तथा राजस्थान राज्यों के बीच कर दिया गया।

निष्कर्ष -

विवेच्य युग में मालवा राज्य की सीमायें विभिन्न राजवंशों के संरक्षण में विशेष रूप से परमार राजाओं के राज्य काल में विस्तृत हुई। यह विशाल राज्य राजा के आधिपत्य में शासन व्यवस्था को सुव्यवस्थित रखने के लिये कई 'प्रान्तों' में विभाजित था, जिसकों 'मण्डल' कहते थे। परमार अभिलेखों में मालवा देश के सत्रह मण्डलों का उल्लेख है। इन मण्डलों के विभाजन में 'विषय' एवं 'भोग' दोनो का उल्लेख है, किन्तु इनका पास्पिरिक सम्बन्ध निश्चित नहीं है। गांगुली ने मण्डलों के विभाजनके बारे में 'पाठकों' में बताया है। ये पाठक वर्तमान परगनों के समकक्ष होते थे। पाठकों का उपविभाजन 'प्रतिजागरणक' में बताया गया है। परमार अभिलेखों में इनकी संख्या आठ वर्णित की गयी है। प्रादेशिक शासन 'देश', 'भुक्ति' तथा 'विषय' में विभक्त था। 'विषय' के अन्तर्गत 'ग्राम' तथा 'त्रीर्थी' परिषदे थी। नगर की व्यवस्था नगर का 'प्रधान' अर्थात 'नगरपति' करता था। भोज ने सम्पूर्ण राज्य को नगरों एवं जनपदों में विभक्त कर राज्य को राष्ट्र नाम से सम्बोधित किया है। नगरों के अतिरिक्त ग्रामों के भी उल्लेखनीय विवरण प्राप्त है। एक मण्डल के अन्तर्गत कई ग्राम होते थे। ग्रामों की व्यवस्था के लिये राज्य के द्वारा अलग से कुछ धन राशि दी जाती थी। ग्राम स्थानीय शासन का निम्नतम घटक थे। जनपदीय युग से चली आ रही मालवा राज्य की समृद्धशीलता विवेच्य युग भी पूर्णतः विद्यमान रही। समय की गतिविधियों के साथ इसका अस्तित्व धूमिल नहीं वरन् उन्नत ही हुआ है।

सन्दर्भ सूची -

1. डॉ. डी. सी. गांगुली, परमार राजवंश का इतिहास, प्रकाशन केंद्र, लखनऊ, पृ. 44
2. इम्पीरियल गजेटियर, भारत सरकार, भाग 4 पृष्ठ 246
3. ए. पी. इण्डिका, भाग 26 पृष्ठ 133
4. राय चौधरी, प्राचीन भारत का राजनीतिक इतिहास, किताब महल, इलाहाबाद, पृ. 629.

5. स्मिथ, वी. ए., अर्ली हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया, अटलांटिक पब्लिशर्ष एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, पृष्ठ 34
6. इण्डियन हिस्ट्री (क्वाटर्ली जर्नल), भाग 24, 1948, पृष्ठ 175.
7. राय चौधरी, प्राचीन भारत का राजनीतिक इतिहास, किताब महल, इलाहाबाद, पृ. 606.
8. सरकार डी. सी. एन्सिएंट-मा-वि-टेडीसन, पृष्ठ 2, टिप्पणी 8.
9. ए. पी. इण्डिका, भाग 9 पृष्ठ 296-300.
10. सरकार डी. सी. एन्सिएंट -मा-वि-टेडीसन, पृष्ठ 17.
11. ए. पी. इण्डिका, भाग 1 पृष्ठ 233.
12. इण्डियन ऐन्टीक्वेरी (पत्रिका), भाग 6, पृष्ठ 159.
13. ए. पी. इण्डिका, भाग 1 पृष्ठ 234 तथा भाटिया पी., द परमारज, पृष्ठ 33.
14. एल. पी. टेस्सीटोरी, इण्डियन ऐन्टीक्वेरी (पत्रिका), भाग 19, पृष्ठ 69, भाग 8, पृ. 85-93.
15. गांगुली डी. सी., परमार राजवंश का इतिहास, प्रकाशन केंद्र, लखनऊ, पृ. 39
16. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, काशी, भाग 3, पृष्ठ 5.
17. डॉ. भगवतीलाल राजपुरोहित, भारत के प्राचीन राजवंश, भाग 1, पब्लिकेशन स्कीम, जयपुर, पृ. 99-103
18. इण्डियन कल्चर, भाग 11, पृष्ठ 397-401, तथा नवसाहसांक चरित, 10 पृष्ठ 161.
19. हैदराबाद आर्कियोलाजिकल सीरीज नम्बर 8, पृष्ठ 13, श्लोक 43, को दण्डकाव्य पृष्ठ 592.